## नियंत्रण के उपाय :

1. खेत की साफ-सफाई पर ध्यान देवें (रोगी पौधों को अवशेषों को एकत्रित कर जला देवें।
2. गर्मी में खेत को खाली छोड़े गहरी जुताई कर खुला रखें।
3. कम से कम 3 वर्ष का फसल चक्र (जीरा-ग्वार-गेहूं-सरसों) अपनाएं।
4. जब सरसों की फसल कट जाए तो उसका कचरा, फलकटी समेत उसी खेत में ही दबाकर तेज गर्मी के दिनों में एक पानी देना चाहिए। इस कचरे के सड़ने से फफूंदनाशक गैसों की उत्पत्ति होती है, जो उखटा रोग की फफूंद को मारती है।
5. स्वस्थ्य व नाशक प्रतिरोधी किस्मों (GC4, RZ223) के बीज बुवाई के काम में लेवें।
6. बीजों को कार्बन्डाजिम 50 डब्ल्यू पी या ट्राईकोडर्मा (मित्र फफूंद) कल्चर से 4 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करें।
7. खड़ी फसल में रोग का प्रकोप होने पर रोग ग्रस्त पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देवे तथा डाई किलोग्राम ट्राईकोडर्मा कल्चर बुवाई के पहले खेत में देवे तो ज्यादा फायदा करेगा।

**झुलसा:** यह रोग आल्टरनेरिया ब्रन्सई नामक फफूंद से उत्पन्न होता है जो कि रोगी पौधों के अवशेषों पर जमीन में रहती है। यह रोग फसल पर फूल आने की अवस्था पर दिखाई देता है तथा रोगी पौधों से स्वस्थ्य पौधों पर इस रोग का फैलाव हवा द्वारा हवा बहने की दिशा में खड़े पौधो पर आगे से आगे होता जाता है। इस रोग की शुरूआत छोटे-छोटे धब्बों के रूप मे पत्तियों पर होती है। मौसम की अनुकूलता यानि आर्द्र मौसम, बादलों से आच्छादित आकाश, 23-28 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान के समय पर यह रोग सामान्यता देखा जाता है। रोग संक्रमण के पश्चात यदि नमी लगातार बनी रहे या छूट-पूट वर्षा हो जाये तो रोग उग्र रूप धारण कर लेता है तथा तने को भी चपेट मे लेताहै। समय गुजरने के साथ-साथ रोग धब्बे बड़े होकर बैंगनी और बासद में गहरे भूरें रंग के हो जाते है। रोग के अधिक उग्र रूप धारण करने पर रोगी पत्तियाँ झुलसी हुई नजर आती है। रोग ग्रसित पौधों में बीज बिल्कुल भी नहीं बनते है और यदि बनते है तो छोटे और सिकुड़े हुए होते है, जिनमें अंकूरण की क्षमता नही होती है। यह रोग इतनी तेजी से फैलता है कि रोग के लक्षण दिखाई देते ही नियंत्रण न कराया जाए तो फसल को नुकसान से बचाना मुस्किल हो जाता है।

## नियंत्रण उपाय :

1. इस रोग की रोकथाम के लिये खेत के आस-पास पिछले साल का रोगग्रस्त कचरा नहीं छोड़ना चाहिए।
2. गर्मियों में गहरी जुताई कर खेत को खुला छोड़े।
3. रोग प्रतिरोधी किस्मों का बीज बुवाई के काम में लेंवे।
4. बीजों को कार्बे-डाजिम 50 डब्ल्यू पी. 2 प्रति किलो की दर से उपचारित कर बुवाई करें।

**छाछ्या :** यह रोग ऐरीसाइफी पोलीगोनी नामक फफूंद से उत्पन्न होता है तथा इस रोग के कारण जड़ों को छोड़कर पौधे के सभी भाग इसकी चपेट में आ जाते है। यह अधिकतर फूल आने से बीज के दौरान उग्र अवस्था में दिखाई देता है। रोग की शुरूआत छोटे-छोटे सफेद धब्बों के रूप में निचली पत्तियों से होती है, धीरे-धीरे आपस में मिलकर पत्तियों की पूरी सतह पर फेल जाते है। यह रोग धीरे-धीरे पूरे पौधों पर फैल जाता है, गर्म व नमी वाले मौसम में रोग तेजी से फैलता है। कई बार तो ऐसा प्रतीत होता है मानो जीरे के खेत में पौधों पर आटा भुरक दिया हो। मौसम के शुष्क होते ही इस रोग का असर और प्रसार स्वत: कम हो जाता है। रोगी पौधों में भोजन बनाने की क्रिया धीमी पड़ जाती है तथा उपज में भारी कमी आ जाती है। इस रोग का फैलाव हवा के थपेड़ों, पानी, कीटों तथा अन्य साधनों से होता है।

## नियंत्रण उपाय :

1. रोगी पौधें के अवशेष एकत्रित कर नष्ट करें।
2. उन्नत रोग रोधी किस्मों की बुवाई करें।
3. इसके अलावा 25 किलोग्राम गंधक का चूर्ण प्रति हैक्टेयर की दर से भूरकाव करें या 2.5 किलोग्राम घुलनशील गंधक चूर्ण पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

जीरे की फसल में माहू और झुलसा रोग का जैविक नियंत्रण : जैविक जीरे की फसल में मोयला और झुलसा रोग नियंत्रण के लिए गौ-मूत्र 10 प्रतिशत + लहसून छाछ 2 प्रतिशत + निम्बोली घोल 2.5 प्रतिशत का मिश्रित छिड़काव दो बार करें। आवश्यकता पड़ने पर छिड़काव को 10-15 दिन के अन्तराल पर पुन: करें।

**कटाई :** जीरे की फसल 110 से 120 दिन में पककर तैयार हो जाती है। फसल को दांतली के काटकर अच्छी तरह सुखा लेवें। फसल के ढेर को जहां तक संभव हो पक्के फर्श पर धीरे-धीरे पीट कर दोनों को अलग-अलग कर लेवें तथा दानों से धूल, हल्का कचरा एवं अन्य पदार्थ प्रचलित विधि द्वारा ओसाई कर दूर करें व अच्छी तरह सुखाकर बोरियों में भरें।

**उपज :** उपरोक्त उन्नत कृषि विधियां अपनाने से 8 से 12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर जीरे की उपज प्राप्त की जा सकती है।

**भण्डारण :** भण्डारण करते समय दानों में नमी की मात्रा 8.5 से 9 प्रतिशत से ज्यादा नहीं होनी चाहिए। बोरियों को दिवार से 50 से 60 से.मी. की दूरी लकड़ी की पट्टियों पर रखें व चूहों व अन्य कीटों के नुकसान से बचायें। संग्रहित जीरे को समय-समय पर धूप में रखें। उपज की गुणवत्ता मापदण्डों के अनुसार यह आवश्यक है कि कटाई के बाद भी सभी क्रियाओं में गुणवत्ता बनाये रखने के लिये सावधानी रखी जाये।

ग्रामीण विकास विज्ञान समिति (ग्राविस)
3/437, 459, मिल्कमैन कॉलोनी, पाल रोड़, जोधपुर - 342008 (राज.)
फोन नं. 0291-2785118, 2785317 फैक्स : 0291-2785118
ईमेल : email@gravis.org.in वैबसाईट : www.gravis.org.in

## परियोजना, मुख्यधारा के कृषि जैव विविधता संरक्षण और कृषि क्षेत्र में उपयोग परिस्थिति की तंत्र सेवाओं को सुनिश्चित करने और कमजोरता को कम करने के लिए

इस परियोजना का उद्देश्य भारत के 4 कृषि-क्षेत्रों में किसान समुदायों की आजीविका में सुधार और पहुंच साझा करने के लिए कृषि और स्थायी उत्पादन में लचीलापन के लिए कृषि जैवविविधता के संरक्षण और उपयोग को मुख्यधारा में लाना है। यहां कई कृषि प्रदर्शन समुदाय आधारित भागीदारी दृष्टिकोणों के माध्यम से किये जाएगें जो मौजूदा फसल विविधता के रख रखाव और कम से कम 14 फसलों की उपयुक्त नई सामग्रियों की शुरूआत और तैनाती का समर्थन करते है। प्रस्तावित विभिन्न दृष्टिकोण में जागरूकता अभियान, बीज, मेले, विविधता मंच, बीज आपूर्ति प्रणालियों को मजबूत करना और सामुदायिक जीन बैंक की स्थापना और लाभ देने में सक्षम बनाती है। यह परियोजना किसानों को विविध समृद्ध समाधानों को अपनाने और लाभ देने में सक्षम बनाती है। यह परियोजना किसानों और समुदायों के साथ सीधे काम करेगी, ताकि वे जलवायु में बदलाव के कारण आने वाली चुनौतियों का सामना कर सकें। इसमें सहभागी फसल मूल्यांकन और उपयुक्त फसल विविधता की पहचान और वैज्ञानिक रूप से ध्वनि प्रमाण के आधार पर विभिन्न प्रकार के अनुकूलन, किसानों और समुदायों द्वारा इसकी पुष्टि शामिल है, जिसमें पुरुषों और महिलाओं के स्वयं सहायता समूह शामिल है। मूल्य संवर्धन के माध्यम से आय और अन्य आजीविका सुधार कार्यों और स्थानीय फसलों और जमीनों से अद्वितीय उत्पाद विकास और प्रभावी बाजार लिंक के माध्यम से उनका व्यावसायिकरण भी मुख्यधारा का समर्थन करेगा। परियोजना कृषि जैवविविधता के संरक्षण और उपयोग के माध्यम से क्षमता निर्माण और महिलाओं के सशक्तिकरण पर विशेष जोर देती है। जीरा बीजीय मसाले वाली एक प्रमुख फसल है। मसाले के रूप में जीरे की सब्जियो, सूप, अचार, सॉस व पनीर को सुस्वादिष्ट बनाने के लिये प्रयोग में लिया जाता है। जीरे का उपयोग नमकीन, बिस्किट, केक, अचार व चटनी बनाने में भी किया जाता है और इसका उपयोग औषधियाँ बनाने, जलजीरा, लस्सी आदि पेय पदार्थों व दवाईयों में सुगंध लाने के लिए किया जाता है। जीरे के वाष्पशील तेल का उपयोग सुगंधित साबुन व केश तेल बनाने व शराब आदि पेय पदार्थों को सुसज्जित करने में भी किया जाता है। जीरे में वायुनाशक, मूत्रवर्धक व अग्निदीपन गुण पाये जाते है जिसके कारण देशी व आयर्वेदिक दवाओं में जीरे का उपयोग होता है। भारत में जीरे की खेती मुख्यत: गुजरात एवं राजस्थान में की जाती है। राजस्थान में जीरे की खेती मुख्यत: बाड़मेर, जालोर, जोधपुर, नागौर, पाली, जैसलमेर, अजमेर, सिरोही एवं टोंक जिलों में की जाती है।

**जलवायु :** जीरा शरद ऋतु फसल है इसके लिए शुष्क एवं साधारण ठंडे मौसम की आवश्यकता होती है। जिन क्षेत्रों में वायुमंडलीय नमी ख़ासतौर पर फूल व बीज

बनते समय अधिक रहती है ऐसे क्षेत्र जीरे की क्षेती के अनुकूल नहीं है। अधिक वायुमंडल नमी, रोग व कीटों को पनपने में सहायक होती है तथा जीरे की फसल पाला सहन करने में असमर्थ होती है। बीज पकने के समय शुष्क साधारण गर्म मौसम फसल हेतु अच्छा रहता है।

**भूमि तथा भूमि की तैयारी :** जीरे की फसल के लिये जीवांश युक्त उचित जल विकास वाली दोमट मिट्टी उपयुक्त रहती है। अधिक समय तक भूमि में पानी ठहराव उखटा रोग को बढ़ावा देता है। मध्यम प्रकार की भारी एवं लवणीय मिट्टी जिसकी लवणीयता अधिक न हो, में भी जीरे की फसल उगाई जा सकती है। बुवाई पूर्व खेती की मिट्टी को भूरभूरी बनाने हेतु खेत की अच्छी जुताई करें तथा कंकड़-पत्थर, पुरानी फसल के अवशेष, खरपतवार व अन्य अवांछनीय चीजों को निकाल कर खेत को साफ कर देना चाहिए व अंचित बहुवर्षीय फसल चक्र अपनाना चाहिए।

**उन्नत किस्में :**

**गुजरात जीरा - 4 (जी.सी.4) :** यह प्रजाति गुजरात कृषि विश्वविद्यालय के मसाला अनुसंधान केन्द्र, जगुदान द्वारा तैयार की गयी है। इसके पौधे बौने व झाड़ीनुमा होते है तथा शाखाएं भी अधिक होती है। यह किस्म उखटा रोग के प्रति प्रतिरोधी है तथा 110 से 120 दिन में पककर 7-10 क्विंटल प्रति हैक्टेयर उपज देती है। इस किस्म के बीजों में वाष्पशील तेल की मात्रा 4.0 प्रतिशत तक होती है।

**आर.जेड-223 :** इस किस्म में अधिक शाखाएं एवं अधिक अम्बल होते है, राजस्थान के सभी क्षेत्रों के लिये उपयुक्त इसके दाने सुडौल एवं लम्बे होते हैं। इस किस्म में उखटा व झुलसा रोग प्रतिरोधकता अधिक है। यह किस्म 120-130 दिन में पक जाती है औसतन 6 क्विंटल प्रति हैक्टेयर उपज देती है।

**खाद एवं उर्वरक :** जीरे की अधिक पैदावार लेने के लिए 10 टन प्रति हैक्टेयर हिसाब से जुताई से पहले अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद खेत में बिखेर कर मिला देनी चाहिए।2 )ढाई टन राया का अवशेष प्रति हैक्टेयर के हिसाब से अप्रैल-मई माह में खेत में डालकर सिंचाई कर तवी चलाकर अच्छी तरह से मिट्टी में मिलाने से उखटा रोग नियंत्रण के साथ-साथ मृदा में जीवांश की मात्रा को भी बढ़ाता है। उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी परीक्षण परिणाम के अनुसार करना चाहिए।औसत उर्वरता वाली भूमि में 30 किलोग्राम नत्रजन 20 किलोग्राम फॉस्फोरस एवं 18 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टेयर की आवश्यकता रहती है।

**बीज की मात्रा एवं बीजोपचार:** अच्छी उन्नत किस्म का 12-15 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर रहता है।फसल को बीज जनित रोगों से बचाने हेतु बुवाई से पहले बीजों का कार्बण्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. से उपचार अवश्य करें। इसके पश्चात बीजों को बुवाई करें।

**बुवाई का समय व तरीका:** जीरे की बुवाई नवम्बर के पहले पखवाड़े में कर देनी चाहिए।साधारणतया किसानों द्वारा जीरे की बुवाई छिटकाव विधि से की जाती है। पहले से तैयार खेत में उचित आकार की क्यारीयां बनाकर उसमें बीजों को एक साथ छिटक कर क्यारियों में लोहें की दंताली इस प्रकार फिरा देनी चाहिए कि बीज के ऊपर मिट्टी की एक हल्की परत चढ़ जाये। ध्यान रखें कि बीज जमीन से अधिक गहरा नहीं जाये। परन्तु निराई, गुड़ाई अन्य श्रम क्रियाओं व छिड़काव की सुविधा की दृष्टि से छिटकाव विधि की अपेक्षा कतारों में बुवाई करना अधिक उपयुक्त पाया गया है। कतारों में बुवाई के लिये सीडड्रिल से 30 सेन्टीमीटर की दूरी पर कतारों में बुवाई की जा सकती है। बुवाई के समय इस बात का ध्यान रखें कि बीज मिट्टी से एकसार ढ़क जाये तथा मिट्टी की परत एक सेन्टीमीटर से ज्यादा मोटी ना हो।

**सिंचाई :** बुवाई के तुरन्त बाद सिंचाई करें एवं दूसरी हल्की सिंचाई पहली सिंचाई के 8-10 दिन बाद अंकुरण के समय करें। अगर दूसरी सिंचाई के बाद पूर्ण अंकुरण नही हुआ हो या जमीन पर पपड़ी जम गई हो तो एक हल्की सिंचाई और करना लाभदायक रहेगा। इसके बाद मृदा की संरचना तथा मौसम के अनुसार 15 से 25 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें। दाने बनते समय अंतिम सिंचाई करनी चाहिए लेकिन पकती हुई फसल में सिंचाई न करें। फव्वारा विधि द्वारा कुल 5 सिंचाईयों पहली बुवाई के समय, फिर दस, तीस, पच्चपन एवं अस्सी दिनों की फसल अवस्था पर करें व फव्वारा 3 घंटे चलायें।

**छंटाई व निराई-गुड़ाई :** जीरे की शुरुआती बढ़वार बहुत धीमी होती है तथा इसका पौधा भी काफी छोटा होता है। अत: इसको खरपतवारों से काफी प्रतिस्पर्धा करनी पड़ती है। जीरे की फसल में खरपतवार नियंत्रण तथा भूमि में उचित वायु संचार बनाये रखने के लिये दो निराई-गुड़ाई आवश्यक है। प्रथम निराई - गुड़ाई बुवाई के 30-35 दिन बाद व दूसरी 55-60 दिनों के बाद करनी चाहिए। पहली निराई गुड़ाई के समय अनावश्यक पौधों को भी उखाड़ दे जिससे पौधे से पौधे की दूरी 5 से.मी. रहें।

## प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ

**मोयला :** इसके आक्रमण से फसल को काफी नुकसान होता है। यह हरे पीले रंग का सूक्ष्म कोमल शरीर वाला कीट होता है।इसे चेपा, माहू, कालिया मच्छर भी कहते है। यह कीट पौधे के कोमल भाग से रस चूसकर हानि पहुँचाता है। इसका प्रकोप प्राय: फसल में फूल आने के समय से प्रारम्भ होता है और फसल में दाना पकने तक रहता है। शुरू में इस कीट का प्रकोप गुच्छों में कुछ पौधों पर होता है जो कई दिनों तक बादलों के रहने पर इस कीट का प्रकोप पूरी फसल में फैल जाता है।

**उखटा :** यह रोग जड़ो पर लगता है तथा मृदा व बीज जनित है। इस जीरे के पौधे अपने विकास की किसी भी अवस्था में इस रोग से संक्रमित हो सकते है। ( बीज के अंकुरण से फसल पकने तक ) इसके सर्वप्रथम लक्षण के रूप में पत्तियाँ पीली पड़ जाती है और धीरे -धीरे पौधा मुरझा कर सूखने लगता है। यदि रोग का संक्रमण फूल या बीज बनने के समय होता है तो जीरा का बीज पतला, छोटा एवं सिकुड़ा हुआ पैदा होता है। यदि रोग ग्रसित जड़ों को चीर कर देखे तो उनके वाहिनी उत्कों तथा तने में लम्बी काली रंग की धारी दिखाई पड़ती है। इस रोग की शुरूआत खेत में छोटे - छोटे बिखरे हुए खंड़ो में होती है। रोग का प्रभाव उन खेतों में अधिक देखा गया है, जहां लगातार उसी खेत में जीरे की खेती की जाती है।